International Journal of Education, Modern Management, Applied Science & Social Science (IJEMMASSS)
An International Quarterly bi-lingual Multidisciplinary Double Blind Open Access Peer Reviewed Refereed Journal
ISSN:2581-9925, Impact Factor (Cosmos: 7.555 & I2OR: 5.105), Volume 08, No. 03(I), July-September, 2026, pp. 221-229

मधु कांकरिया के उपन्यासों में चित्रित परिवारः संयुक्त, एकल एवं विघटित परिवार

सुनिता राव[1*] | डॉ. राजबाला[2]

[1]शोधार्थी, हिन्दी, ज्योति विद्यापीठ महिला विश्वविद्यालय, जयपुर, राजस्थान।
[2]शोध निर्देशिका, ज्योति विद्यापीठ महिला विश्वविद्यालय, जयपुर, राजस्थान।

[*]Corresponding Author: khwahishsingh378@gmail.com

Citation: राव, सुनिता एवं राजबाला (2026). मधु कांकरिया के उपन्यासों में चित्रित परिवारः संयुक्त, एकल एवं विघटित परिवार. International Journal of Education, Modern Management, Applied Science & Social Science, 08(03(I)), 221–229.

सार

परिवार मानव समाज की सबसे प्राचीन, आधारभूत एवं सार्वभौमिक सामाजिक संस्था है। व्यक्ति का जन्म, पालन–पोषण, समाजीकरण, नैतिक विकास, सांस्कृतिक परंपराओं का हस्तांतरण तथा व्यक्तित्व निर्माण परिवार के माध्यम से ही होता है। भारतीय समाज में परिवार केवल रक्त–संबंधों का समूह नहीं है, बल्कि यह भावनात्मक, सांस्कृतिक, धार्मिक तथा आर्थिक संबंधों का एक सशक्त तंत्र है। बदलते सामाजिक परिवेश, औद्योगीकरण, नगरीकरण, वैश्वीकरण, सूचना–प्रौद्योगिकी, शिक्षा के प्रसार तथा महिलाओं की आर्थिक आत्मनिर्भरता ने भारतीय परिवार की संरचना एवं कार्यप्रणाली में व्यापक परिवर्तन उत्पन्न किए हैं। संयुक्त परिवारों का विघटन, एकल परिवारों का विस्तार तथा पारिवारिक संबंधों में बढ़ती जटिलताएँ आज के समाज की प्रमुख सामाजिक वास्तविकताएँ बन चुकी हैं। प्रस्तुत शोध–पत्र में मधु कांकरिया के प्रमुख उपन्यासोंकृसेज पर संस्कृत, सलाम आख़िरी, सूखते चिनार, खुले गगन के लाल सितारे तथा हम यहाँ थेकृके आधार पर परिवार की बदलती अवधारणा का समाजशास्त्रीय विश्लेषण किया गया है। अध्ययन में गुणात्मक शोध–विधि, विषयवस्तु विश्लेषण तथा समाजशास्त्रीय एवं स्त्रीवादी दृष्टिकोण का उपयोग किया गया है। अध्ययन से स्पष्ट होता है कि मधु कांकरिया परिवार को स्थिर संस्था नहीं मानतीं, बल्कि उसे निरंतर परिवर्तनशील सामाजिक व्यवस्था के रूप में देखती हैं। उनके अनुसार परिवार की वास्तविक शक्ति केवल परंपरा में नहीं, बल्कि समानता, संवाद, सहिष्णुता, पारस्परिक सम्मान, भावनात्मक निकटता तथा मानवीय संवेदनाओं में निहित है।

शब्दकोशः *मधु कांकरिया, संयुक्त परिवार, एकल परिवार, विघटित परिवार, स्त्री विमर्श, आधुनिकता, नगरीकरण, वैश्वीकरण, पितृसत्ता, पारिवारिक मूल्य।*

प्रस्तावना

समकालीन हिंदी कथा–साहित्य में मधु कांकरिया का नाम उन शीर्षस्थ रचनाकारों में परिगणित होता है, जिन्होंने समाज के नग्न यथार्थ, भूमंडलीकरण के दुष्प्रभावों, और हाशिये के समुदायों के जीवन–संघर्ष को पूरी प्रामाणिकता के साथ उकेरा है। इक्कीसवीं सदी के बदलते सामाजिक परिवेश में, जहाँ एक ओर उपभोक्तावाद और महानगरीय संस्कृति ने मानव जीवन को नई भौतिक सुविधाएँ प्रदान की हैं, वहीं दूसरी ओर इसने मानवीय संबंधों और विशेष रूप से 'परिवार' नामक प्राथमिक सामाजिक संस्था को गहराई से विखंडित किया है। मधु कांकरिया का साहित्य केवल स्त्री–विमर्श, राजनीतिक विमर्श या आदिवासी चेतना तक सीमित नहीं है; बल्कि यह

[*] *Copyright © 2026 by Author's and Licensed by Inspira. This is an open access article distributed under the Creative Commons Attribution License which permits unrestricted use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original work properly cited.*

पारिवारिक संरचनाओं में आ रहे आमूल–चूल परिवर्तनों का एक अत्यंत सूक्ष्म, समाजशास्त्रीय और मनोवैज्ञानिक अध्ययन प्रस्तुत करता है।

किसी भी सभ्यता की मूल इकाई उसका परिवार होता है। भारतीय समाज, जो ऐतिहासिक रूप से अपने विस्तृत, सहिष्णु और सुदृढ़ संयुक्त परिवारों के लिए जाना जाता था, आज आधुनिकीकरण, शहरीकरण और बेलगाम व्यक्तिवाद के प्रभाव में संक्रमण के एक जटिल और त्रासद दौर से गुजर रहा है। कांकरिया के कथा–साहित्य में परिवार के तीन प्रमुख रूपकृसंयुक्त परिवार, एकल परिवार और विघटित (या टूटते) परिवारकृ पूरी स्पष्टता के साथ परिलक्षित होते हैं। उनका साहित्य यह उद्घाटित करता है कि पारिवारिक संस्था का पतन केवल एक आकस्मिक घटना नहीं है, बल्कि यह नव–पूँजीवादी व्यवस्था, पितृसत्तात्मक कुंठाओं, और पीढ़ियों के मध्य बढ़ते वैचारिक अंतराल का स्वाभाविक परिणाम है।

मधु कांकरिया की दृष्टि में 'परिवार बोध' और 'राष्ट्र बोध' एक–दूसरे से विच्छिन्न नहीं हैं। समाज का बुनियादी ढांचा परिवार से ही निर्मित होता है और उनका दृढ़ मत है कि स्त्री या पुरुष की मुक्ति अकेले शून्य में संभव नहीं है; यदि कोई स्त्री स्वयं को मुक्त करती भी है, तो उसे उसी समाज और पारिवारिक ढांचे के भीतर अपना सह–अस्तित्व खोजना पड़ता है। अतः, उनका लेखन एकांगी स्त्रीवाद का पक्षधर न होकर समग्र 'मानव मुक्ति' और 'सभ्यता विमर्श' का प्रस्तावक है, जहाँ परिवार एक शोषणकारी संस्था से मुक्त होकर एक सहयोगात्मक इकाई बन सके।

मधु कांकरिया के साहित्य में पारिवारिक समाजशास्त्र की रूपरेखा

मधु कांकरिया ने अपने उपन्यासों और कहानियों में समाज के विभिन्न वर्गों, पृष्ठभूमियों और भौगोलिक क्षेत्रों के परिवारों का चित्रण किया है। उनकी रचनाओं में दृष्टिगोचर होने वाली पारिवारिक संरचनाओं और उनमें व्याप्त जटिलताओं को निम्नलिखित रूप में वर्गीकृत किया जा सकता हैः

क्र.सं.	उपन्यास / रचना का नाम	चित्रित पारिवारिक संरचना का प्रकार	मुख्य समाजशास्त्रीय समस्या / विषय-वस्तु
1	सेज पर संस्कृत	विघटित / पुरुष-विहीन परिवार	पितृसत्तात्मक समाज में असुरक्षा, आर्थिक विपन्नता, अस्तित्व रक्षा हेतु धार्मिक आडंबरों की शरण।
2	खुले गगन के लाल सितारे	संयुक्त एवं मध्यवर्गीय परिवार	पारिवारिक घुटन, पीढ़ियों का अंतराल, बेमेल विवाह, नक्सलवाद का पारिवारिक जीवन पर प्रभाव।
3	पत्ताखोर	एकल / महानगरीय परिवार	कामकाजी माता-पिता की 'समय की विपन्नता', बच्चों में भयंकर अकेलापन, युवा पीढ़ी में बढ़ती नशे की लत।
4	हम यहाँ थे	विघटित एवं नव-एकल परिवार	वैवाहिक टूटन, मायके में परित्यक्ता बेटी का तिरस्कार, सिंगल मदर का संघर्ष, आदिवासी संयुक्त परिवार का मिथक।
5	सलाम आख़िरी	परिवार-विहीन / छिन्न-भिन्न	वेश्यावृत्ति, पारिवारिक संरचना से पूर्ण अलगाव, सामाजिक बंधनों से मुक्ति परंतु देह का घोर बाज़ारीकरण।
6	सूखते चिनार	सैन्य परिवार / विद्रोही संतान	पारिवारिक व्यापार (तराजू) से विद्रोह कर सेना (बंदूक) अपनाना, शहादत के बाद परिवार का मनोवैज्ञानिक विघटन।
7	रेशे (कहानी)	भावनात्मक रूप से विघटित परिवार	पति-पत्नी के मध्य संवादहीनता, असहमति से गर्भपात, विश्वासघात और मानसिक अलगाव।

यह वर्गीकरण इस तथ्य को निर्विवाद रूप से रेखांकित करता है कि कांकरिया के साहित्य में 'परिवार' कोई स्थिर, आदर्श या वायवीय संस्था नहीं है। इसके विपरीत, यह एक ऐसा रणक्षेत्र है जहाँ व्यक्तिवाद, पूँजीवाद, पुरानी सामंती मानसिकता और आधुनिकता के बीच निरंतर, रक्त–रंजित संघर्ष चल रहा है।

संयुक्त परिवारः परम्परागत आदर्शों का क्षरण और याथार्थवादी चित्रण

पारंपरिक भारतीय समाजशास्त्र में संयुक्त परिवार को संस्कृति की रीढ़ माना जाता रहा है, जहाँ सभी सदस्य एक साथ निवास करते हैं, साझा चूल्हा होता है, आर्थिक सहयोग करते हैं, और पीढ़ियों का ज्ञान स्वतः हस्तांतरित होता है। परंतु, मधु कांकरिया का पैना यथार्थवाद संयुक्त परिवार के इस रूमानी और यूटोपियन स्वरूप को पूरी तरह ध्वस्त कर देता है। वे संयुक्त परिवार के भीतर पलने वाली घुटन, शोषक वृत्तियों, और विशेषकर स्त्रियों तथा वृद्धों के प्रति होने वाले अमानवीय व्यवहार को बेनकाब करती हैं।

- **मध्यवर्गीय संयुक्त परिवार में स्त्री की स्थिति और घुटन**

नक्सलबाड़ी आंदोलन की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर आधारित उनके बहुचर्चित उपन्यास 'खुले गगन के लाल सितारे' में कलकत्ता के एक मध्यवर्गीय परिवार की दमघोंटू और गलाघोंटू परिस्थितियों का अत्यंत सजीव अंकन किया गया है। उपन्यास की मुख्य पात्र मणि का परिवार इसी मध्यवर्गीय संयुक्त मानसिकता का वीभत्स शिकार है। मणि के माता–पिता की आयु में भारी अंतर है। मणि की माँ, जो विवाह से पूर्व एक आर्थिक रूप से समृद्ध मारवाड़ी परिवार से आई थी, अपने वर्तमान ससुराल की आर्थिक विपन्नता के कारण भीतर ही भीतर कुंठित और कर्कश हो चुकी है। यहाँ यौन सुख का अभाव और धन की कमीकृइन दोनों अभावों ने एक ऐसा पारिवारिक वातावरण निर्मित कर दिया है जहाँ प्रेम, करुणा और सौहार्द के स्थान पर केवल तनाव, कटुता और अंतहीन क्लेश का साम्राज्य है।

इसी संयुक्त परिवार में मणि की बड़ी बहन मुन्नी का विवाह एक ऐसे व्यक्ति से कर दिया जाता है जो गंभीर मानसिक बीमारी का शिकार है। ससुराल में मुन्नी को अपने विक्षिप्त पति के साथ शारीरिक संबंध बनाने के लिए विवश किया जाता है, जिसे नायिका मणि 'पशुवत व्यवहार' की संज्ञा देती है। यह हृदयविदारक प्रसंग संयुक्त परिवार और विवाह संस्था की उस क्रूरता को उघाड़ता है जहाँ परिवार की तथाकथित 'प्रतिष्ठा' या 'सामाजिक दायित्व' की पूर्ति के नाम पर एक स्त्री के शारीरिक और मानसिक अस्तित्व को बिना किसी हिचकिचाहट के दाँव पर लगा दिया जाता है। इसी प्रकार, मणि की दूसरी बहन पारसी, जो मांगलिक होने के कारण विवाह के लिए संघर्ष करती है और एक हादसे में जल जाने के पश्चात जिसका विवाह टूट जाता है, अंततः विरक्त होकर दीक्षा (संन्यास) ले लेती है। यह दर्शाता है कि पितृसत्तात्मक संयुक्त परिवार एक 'असफल' या 'अवांछित' स्त्री को कोई आश्रय नहीं देता, बल्कि उसे समाज से निष्कासित कर धर्म की अंधी सुरंग में धकेल देता है।

'नार्मद' कहानी में गंगाबाई (सोनू की माँ) के माध्यम से कांकरिया ने संयुक्त परिवार में एक गृहिणी की दशा का मार्मिक चित्रण किया है, जहाँ दिन–रात कोल्हू के बैल की तरह खटने के बावजूद उसे परिवार में कोई सम्मान प्राप्त नहीं होता और अपनी ही दादी द्वारा उसे हर बात के लिए दोषी ठहराया जाता है।

- **वृद्धों की हाशिये पर जाती स्थिति और उपयोगितावाद**

संयुक्त परिवारों के विखंडन का एक सबसे बड़ा और पीड़ादायक लक्षण घर के वृद्ध सदस्यों का हाशिये पर जाना है। 'उड़ान' कहानी में लेखिका ने एक ऐसे संयुक्त परिवार का चित्रण किया है जहाँ समीर नामक पात्र अपने दो बेटों, बहुओं और पत्नी के साथ रहता है। रिटायरमेंट के दो वर्ष पश्चात ही समीर का अपने ही घर में कोई सम्मान शेष नहीं रह गया है। उसकी पत्नी निरंतर केवल अपने कमाने वाले बेटों का गुणगान करती है और जीवन भर परिवार का भरण–पोषण करने वाले पति को ''दो कौड़ी का'' समझती है। यह चित्रण इस कटु सत्य को स्थापित करता है कि समकालीन संयुक्त परिवारों में 'मुखिया' वह नहीं है जो आयु या अनुभव में बड़ा है, बल्कि वह है जो आर्थिक रूप से सशक्त है और जो बाज़ार में 'उत्पादक' है।

इसी प्रकार 'कीड़े' कहानी में प्रोफेसर वर्मा की त्रासदी पारिवारिक स्वार्थ–वृत्ति का चरम प्रस्तुत करती है। जिस परिवार के लिए प्रोफेसर वर्मा ने अपने जीवन के बावन साल कठोर परिश्रम किया, उसी परिवार को आज उनकी कोई आवश्यकता नहीं है, जिसके चलते उन्हें 'मर्सी किलिंग' (इच्छा मृत्यु) जैसे चरम निर्णय के बारे में सोचना पड़ता है। बाज़ारवाद ने पारिवारिक संबंधों को भी 'लाभ–हानि' और 'उपयोगिता' के क्रूर तराजू पर तौलना शुरू कर दिया है।

- **आदिवासी सामूहिकताः संयुक्त परिवार का एक भिन्न और सकारात्मक रूप**

संयुक्त परिवार का एक सर्वथा भिन्न, प्राकृतिक और सकारात्मक रूप कांकरिया के उपन्यास 'हम यहाँ थे' तथा 'खुले गगन के लाल सितारे' में आदिवासी समाज के संदर्भ में उभरता है। लेखिका आदिवासी नेता करमा और धरमा की किंवदंती के माध्यम से यह दार्शनिक सिद्धांत स्थापित करती हैं कि जब तक आदिवासी समाज में संयुक्त व्यवस्था थी, सात भाई एक साथ रहते थे, तब तक घर में खुशहाली थी। परंतु जब करमा अधिक कमाने लगा और अभिमानवश अलग (एकल) हो गया, तब से ही उनके दुर्दिन शुरू हो गए और समाज का पतन आरंभ हो गया।

आदिवासी समाज की शक्ति उनकी सामूहिकता और संयुक्त परिवार व्यवस्था में निहित है, जो केवल मनुष्यों तक सीमित नहीं है, बल्कि 'जल, जंगल और ज़मीन' तक विस्तृत है। 'खुले गगन के लाल सितारे' में आलोक जी भगत जब एक गरीब आदिवासी परिवार में बच्चे की मृत्यु पर शोक संवेदना व्यक्त करने जाते हैं, तो वहाँ की अरण्य संस्कृति और गरीबी के बावजूद उनके पारिवारिक जुड़ाव का यथार्थ सामने आता है। भूमंडलीकरण, वेदांत जैसी कॉर्पोरेट कंपनियों के झूठे वादे, और विकास के नाम पर जब इस आदिवासी सामूहिकता को तोड़ा जाता है, तो पूरा समाज विस्थापन, भुखमरी और धर्मांतरण की ओर अग्रसर हो जाता है।

एकल परिवारः आधुनिकता, महानगरीय अलगाव एवं बाल–मनोविज्ञान

शहरीकरण, औद्योगीकरण और कामकाजी जीवनशैली ने विशाल संयुक्त परिवारों को तोड़कर एकल परिवारों को जन्म दिया है। सैद्धांतिक रूप से एकल परिवार को स्त्री–पुरुष समानता, व्यक्तिगत स्वतंत्रता और आर्थिक प्रगति के लिए अधिक अनुकूल माना जाता है, किंतु कांकरिया का कथा–साहित्य इन एकल परिवारों के भीतर पनपते गहन एकाकीपन, असुरक्षा और भयंकर मनोवैज्ञानिक विकृतियों की निर्मम शल्य–चिकित्सा करता है।

- **'पत्ताखोर': कामकाजी माता–पिता, समय की विपन्नता और युवा पीढ़ी का भटकाव**

'पत्ताखोर' उपन्यास आधुनिक महानगरीय एकल परिवार की त्रासदियों का एक अत्यंत प्रामाणिक और डरावना दस्तावेज़ है। इस उपन्यास का केंद्रबिंदु एक युवा छात्र आदित्य है। आदित्य के माता–पिता–हेमंत बाबू और वनश्री–दोनों कामकाजी हैं। नौकरी, करियर और भौतिक सफलता की अंधी दौड़ में उनके पास अपने ही इकलौते पुत्र के लिए समय नहीं है। यहाँ आर्थिक विपन्नता नहीं, बल्कि 'समय की विपन्नता' और भावनात्मक रिक्ति आदित्य के परिवार की शांति, सुख और आनंद को समाप्त कर देती है।

घर के इस नीरस, संवादहीन और मशीनी वातावरण से त्रस्त होकर आदित्य अपने मित्रों के साथ हेरोइन जैसे घातक नशे का सेवन करने लगता है। वह धीरे–धीरे गहरे अवसाद, हताशा और आत्म–विनाश के गर्त में डूब जाता है। समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से यह उपन्यास एक ज्वलंत उदाहरण है कि कैसे आधुनिक एकल परिवार, जो आर्थिक सुरक्षा तो भरपूर प्रदान करते हैं, भावनात्मक सुरक्षा और मार्गदर्शन देने में पूरी तरह विफल सिद्ध हो रहे हैं। परिवार रूपी 'प्राइमरी सोशलाइजेशन एजेंसी' के विफल होने पर, युवा पीढ़ी मादक द्रव्यों, भ्रामक संगति और अपराध की ओर मुड़ जाती है। यद्यपि, कांकरिया इस उपन्यास का अंत पूरी तरह निराशावादी नहीं करतीं; आदित्य अंततः फुटपाथ पर जीवन यापन करने वाले गरीब, किंतु मानवीय संवेदनाओं से भरे लोगों (कालिदास, हरिया, लालबहादुर, इतवारी) से प्रेरणा लेकर नशे की लत से बाहर आता है। वह अपने माता–पिता के अधूरे सपनों को पूरा करता है, जो यह प्रतीक है कि यदि संवेदनाओं को पुनर्जीवित किया जाए, तो एकल परिवार के भटके हुए युवाओं को भी सही मार्ग पर लाया जा सकता है।

- **सिंगल चाइल्ड सिंड्रोम और बाल–मनोविज्ञान पर आघात**

एक साक्षात्कार में मधु कांकरिया और लेखिका चंद्रकांता बंसल एकल परिवारों में तेज़ी से पनप रहे 'सिंगल चाइल्ड' (एकल संतान) के चलन पर गंभीर चिंता व्यक्त करती हैं। उनका मनोवैज्ञानिक विश्लेषण है कि सिंगल चाइल्ड अत्यधिक अकेला होता है। चूँकि उसके पास खेलने, लड़ने–झगड़ने, या अपने सुख–दुःख साझा करने के लिए कोई भाई–बहन नहीं होता, वह 'अंततोगत्वा अपने आप से ही लड़ता है और भीतर ही भीतर बिखर जाता है'। बचपन में एक बच्चा जो खोता है, उसी की हिंसक प्रतिक्रिया उसके भविष्य में देखने को मिलती है।

लेखिका की एक मर्मस्पर्शी डायरी प्रविष्टि ('बंजारा मन और बंदिशें') इस महानगरीय त्रासदी को पूरी नग्नता के साथ उघाड़ती है। वे अपनी एक कामकाजी पड़ोसन का ज़िक्र करती हैं, जिसकी चार वर्षीय नन्हीं बेटी 'खिली' दोपहर दो बजे से शाम तक घर में बाहर से ताला बंद करके अकेली छोड़ दी जाती है। एक दिन अचानक बिजली चले जाने (लोडशेडिंग) के कारण वह बच्ची घुप्प अंधेरे में, भयभीत होकर दीवार से चिपक कर रोती रहती है। कांकरिया समाज से एक तीखा प्रश्न उठाती हैं कि 'क्या आधुनिकता और मुक्ति का मतलब मातृत्व का गला घोंटना है?'। जब घर में कोई आर्थिक अभाव नहीं है, तो भौतिक प्राप्ति की किस अंधी खोज में एक नन्हीं बच्ची के बचपन को झुलसाया जा रहा है? कांकरिया स्पष्ट करती हैं कि ऐसी घोर उपेक्षा के शिकार बच्चे ही बड़े होकर चिड़चिड़े, अंतर्मुखी, बदमिज़ाज, हीन भावना से ग्रस्त और अपराधी बनते हैं। इसी प्रकार 'दाखिला' कहानी में एकल परिवार के भीतर पति–पत्नी के निरंतर होते क्लेश और कलह के कारण बच्चे (विक्रम) का मनोवैज्ञानिक विकास अवरुद्ध हो जाता है और उसका बचपन हमेशा के लिए छिन जाता है।

- **अंतर्राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में परिवाररू क़ानून बनाम मानवीय संवेदना**

पारिवारिक मूल्यों के विघटन की समस्या केवल भारत तक सीमित नहीं है। मधु कांकरिया ने अपने यात्रा–संस्मरणों में ऑस्ट्रेलिया की यात्रा के दौरान मिले स्टीव और क्रिस्टी नामक पात्रों के माध्यम से पश्चिमी समाज में पारिवारिक विघटन का एक तुलनात्मक चित्र प्रस्तुत किया है। क्रिस्टी की माँ ने उसे बचपन में ही छोड़ दिया था, और कठोर कानूनों के कारण वह अपनी माँ से मिल तक नहीं पाई। दूसरी ओर मि. स्टीव हैं, जिन्हें तलाकशुदा पत्नी ने जीवन भर उनके बेटे से मिलने नहीं दिया, और अब वे अपने नवजात पोते से मिलने के लिए तरस रहे हैं। स्टीव यह स्वीकार करते हैं कि ऑस्ट्रेलिया में बढ़ते मनोरोगों और हिंसा का मुख्य कारण टूटते–बिखरते परिवार, भावशून्यता और असुरक्षा बोध में बीतता बचपन ही है। कांकरिया यह चिंतन प्रस्तुत करती हैं कि जो समाज उन्नत और आधुनिक होने का दावा करता है, वह भूल गया है कि 'परिवार ही आदमी को आदमी बनाता है,' और जीवन के मर्म को केवल कठोर कानूनों द्वारा नहीं पकड़ा जा सकता।

विघटित परिवारः सामाजिक दबाव, पितृसत्ता और अस्तित्व का संकट

विघटित परिवार वे हैं जहाँ पारिवारिक संरचना पूरी तरह छिन्न–भिन्न हो चुकी हैकृचाहे वह मुखिया की मृत्यु के कारण हो, वैवाहिक अलगाव (तलाक) के कारण हो, या फिर भावनात्मक शून्यता के कारण। मधु कांकरिया के उपन्यासों में विघटित परिवारों का अंकन अत्यंत प्रखर, संवेदनात्मक और समाज को झकझोरने वाला है।

- **पुरुष–विहीन परिवार और समाज की हिंसक गिद्ध–दृष्टिः 'सेज पर संस्कृत'**

उपन्यास 'सेज पर संस्कृत' एक ऐसे विघटित परिवार की दर्दनाक गाथा है जिसके मुखिया (पिता) और जवान पुत्र (ऋषि) की असामयिक मृत्यु हो चुकी है। परिवार का संपूर्ण उत्तरदायित्व माँ पूर्णिमा देवी पर आ गया है, जिनकी दो युवा पुत्रियाँ हैं–संघमित्रा और छुटकी। पितृसत्तात्मक भारतीय समाज में एक पुरुष–विहीन परिवार की स्थिति अत्यंत असुरक्षित और भयावह होती है। समाज की मानसिक स्थिति ऐसी विकृत है कि घर में सुरक्षा प्रदान करने वाला कोई पुरुष न होने के कारण 'शिकारी कुत्तों की तरह लोगों की नज़र उस घर पर रहती है'।

यह निरंतर असुरक्षा बोध, दरिद्रता, और सामाजिक गिद्ध–दृष्टि पूर्णिमा देवी को इस कदर भयभीत और विक्षिप्त कर देती है कि वह स्वयं भी जैन साध्वी बनने का निर्णय लेती है और अपनी दोनों बेटियों को भी दीक्षा दिलवाकर सांसारिक बंधनों से हमेशा के लिए मुक्त करना चाहती है। यहाँ लेखिका धर्म और परिवार के एक अत्यंत जटिल अंतर्संबंध को उद्घाटित करती हैं। पूर्णिमा देवी का संन्यास किसी उच्च वैराग्य या आध्यात्मिक जागरण का परिणाम नहीं है, बल्कि यह एक असुरक्षित, विघटित परिवार की बेबस स्त्री का क्रूर समाज से भागने का एक 'एस्केप मैकेनिज्म' है। परंतु उसकी बेटी संघमित्रा इस पलायनवाद और धार्मिक पाखंड का पुरजोर विरोध करती है। संघमित्रा जैन मुनियों (जैसे अभय मुनि) द्वारा साध्वियों (जैसे दिव्यप्रभा) के यौन शोषण का यथार्थ देख चुकी है, जहाँ दिव्यप्रभा को पापी औरत साबित कर संघ से निकाल दिया जाता है। संघमित्रा घोषणा करती है कि 'हमें न पति चाहिए न घर... बस थोड़ा–सा भरोसा दो... हम अपना आसमान खुद ढूँढ लेंगी'। यह एक नई, विद्रोही पीढ़ी का उदय है जो विघटित परिवार की कमज़ोरी को अपनी ताकत में बदलना जानती है।

- **वैवाहिक टूटन, परित्यक्ता स्त्री और मायके की विडंबनाः 'हम यहाँ थे'**

'हम यहाँ थे' की नायिका दीपशिखा घरेलू हिंसा, मानसिक प्रताड़ना और वैवाहिक शोषण से तंग आकर अपने पति का घर छोड़ देती है और अपने छोटे बेटे सोनू के साथ अपने मायके आ जाती है। भारतीय सामाजिक संरचना में मायके को स्त्री का अंतिम आश्रय माना जाता है, परंतु कांकरिया यहाँ यथार्थ का निर्मम सत्य प्रस्तुत करती हैं। दीपशिखा की माँ अपनी बेटी के दुःख और संघर्ष से अधिक समाज की 'इज़्ज़त' और पड़ोसियों के तानों को लेकर चिंतित रहती है। माँ निरंतर दीपशिखा को ताने मारती है और उसकी दयनीय स्थिति के लिए उसे ही दोषी ठहराती है (''कौन छोटे बाप की हो गई, खुद से तो इतना भी नहीं होता और चाहती है कि मैं दुनिया के आगे जलील होऊँ... बैठे पाऊंगी पड़ोसियों के बीच ताना मार–मारकर छलनी नहीं करेंगे?'')। दीपशिखा की माँ का यह दकियानूसी रवैया (जैसे निचली जाति के सुदामा के प्रति छुआछूत की भावना) दीपशिखा के खुले विचारों से सीधे टकराता है।

यह प्रसंग एक गंभीर समाजशास्त्रीय अंतर्दृष्टि प्रदान करता हैः पितृसत्तात्मक व्यवस्था में एक 'परित्यक्ता' या तलाकशुदा स्त्री को उसका अपना मूल (जैविक) परिवार भी सहजता से स्वीकार नहीं कर पाता। बेटी का मायके लौटना पारिवारिक 'सामाजिक पूँजी' के लिए एक भारी ख़तरा मान लिया जाता है। ऐसे विघटित पारिवारिक माहौल से त्रस्त होकर ही दीपशिखा एक संस्था के माध्यम से आदिवासियों के बीच जाती है। वहाँ जंगल कुमार के साथ मिलकर वह आदिवासियों के अधिकारों के लिए संघर्ष करती है और वहीं उसे एक वृहत, स्नेही सामाजिक परिवार प्राप्त होता है, जो उसे एक 'माँ' का दर्जा देता है।

- **भावनात्मक विघटनः 'रेशे'**

विघटन सदैव कानूनी (तलाक) या भौतिक नहीं होता; कई बार परिवार एक ही छत के नीचे रहते हुए भी पूरी तरह टूट चुका होता है। मधु कांकरिया की उत्कृष्ट कहानी 'रेशे' वैवाहिक संबंधों की सूक्ष्म जटिलता और संतानोत्पत्ति पर स्त्री की स्वतंत्रता के अधिकार को प्रश्नांकित करती है। कहानी में महुआ और उसका पति अत्यधिक प्रेम में डूबे होते हैं। परंतु जब महुआ गर्भवती होती है, तो वह पति की सहमति या जानकारी के बिना, मायके (अजमेर) जाकर गर्भपात करवा लेती है।

पति, जो पिता बनने के और अपनी माँ को दादी बनाने के सपने संजो रहा था, पत्नी के इस एकतरफा कृत्य से भीतर तक टूट जाता है। वह महसूस करता है कि पत्नी ने न केवल एक भ्रूण की हत्या की है, बल्कि भरोसे, साझा निर्णयों और प्रेम की भी हत्या कर दी है (''कोख चाहे औरत की हो या धरती की, उससे छेड़खानी ठीक नहीं'')। इस घटना के पश्चात उनका वैवाहिक जीवन ''अधर में ही झूलता रहा'' न पूरी तरह जमा, न पूरी तरह उजड़ा। एक ही घर में रहते हुए भी दोनों के बीच आत्मा, विचारों, और संवेदनाओं का भयंकर अकाल पड़ जाता है (''रिश्तों का अकाल'')। लेखिका यहाँ यह विचारणीय प्रश्न छोड़ जाती हैं कि क्या ''निजीकरण'' के दौर में स्त्री के शरीर पर उसका एकाधिकार, पारिवारिक सह–अस्तित्व और पति की भावनाओं को कुचल कर ही

स्थापित किया जा सकता है? क्या सह–निर्णय सिर्फ शब्दों की मीनार हैं?। यह कहानी आधुनिक विवाह संस्था के भीतर बढ़ते मनोवैज्ञानिक अलगाव और सूक्ष्म विघटन का अद्वितीय नमूना है।

- **परिवार–विहीनता का चरम बिंदुः 'सलाम आख़िरी'**

विघटित परिवार का सबसे भयावह, अंधकारमय और हृदयविदारक रूप वहाँ दृष्टिगोचर होता है जहाँ परिवार नामक संस्था का वजूद ही पूरी तरह मिट जाता है। मधु कांकरिया का चर्चित उपन्यास 'सलाम आख़िरी' कलकत्ता के सोनागाछी, बहुबाज़ार, और कालीघाट जैसे रेडलाइट इलाकों में रहने वाली वेश्याओं (नूरी, कृष्णा, रमा, नलिनी, जुली, चंपा) के जीवन का मर्मस्पर्शी और प्रामाणिक दस्तावेज़ है।

इन बस्तियों में रहने वाली स्त्रियों को मर्यादाओं, सांस्कृतिक परंपराओं, और ''परिवार'' का कोई बंधन या भय नहीं होता; वे परिवार की किलेबंदी का 'बाय–प्रोडक्ट' और सभ्य समाज का गटर बन चुकी हैं। समाजशास्त्रीय दृष्टि से, वेश्यावृत्ति के मूल कारणों में निर्धनता, बेरोजगारी और पारिवारिक विघटन सबसे प्रमुख हैं। सुकीर्ति (पत्रकार) और इंद्रायणी दी (समाजसेविका) के माध्यम से लेखिका स्पष्ट करती हैं कि कोई भी नारी अपनी मर्जी से वेश्या नहीं बनती; यह प्रायः परिवार के ही किसी सदस्य (पति, प्रेमी या दलाल रिश्तेदार) द्वारा बेचे जाने, यौन शोषण, या पारिवारिक सुरक्षा तंत्र के पूरी तरह ध्वस्त हो जाने का परिणाम होता है। एक बार देह–व्यापार के इस दलदल में फँसने के बाद, स्त्री कभी लौटकर सामान्य पारिवारिक जीवन में नहीं जा सकती और अंततः एच.आई.वी. या गुप्त रोगों से तड़पकर मर जाती है। यहाँ परिवार एक रक्षक संस्था न रहकर, स्त्री को वस्तु में तब्दील करने वाली एक शोषक प्रणाली बन जाता है, जहाँ देह की फिलॉसफी ही एकमात्र यथार्थ रह जाती है।

हाशिये की स्त्रियाँ और पारिवारिक उत्तरदायित्व का बोझ

मधु कांकरिया के उपन्यासों में ऐसी स्त्रियों और परिवारों का भी विषद वर्णन है जो समाज और राष्ट्र के लिए अपना सर्वस्व न्योछावर कर देते हैं, परंतु बदले में उन्हें एकाकीपन, अवसाद और राज्य की उपेक्षा ही प्राप्त होती है।

- **अविवाहित युवतियों का मौन बलिदान**

भारतीय परिवारों में अक्सर लड़कियों के विवाह को लेकर कई आर्थिक और सामाजिक समस्याएँ आड़े आती हैं। कांकरिया अपने साहित्य में रेखांकित करती हैं कि कई बार परिवार की आर्थिक विपन्नता के कारण, अपने माता–पिता और भाई–बहनों का उदर–निर्वाह (भरण–पोषण) करने के लिए लड़कियाँ नौकरी करने लगती हैं। परिवार का खर्च उठाते–उठाते उनके यौवन का स्वर्णिम समय यूँ ही व्यतीत हो जाता है। जब तक परिवार की स्थितियाँ सुधरती हैं और उनमें विवाह की इच्छा जाग्रत होती है, तब तक बहुत विलंब हो चुका होता है। अंततः ऐसी लड़कियों को शेष जीवन एक अत्यंत दयनीय, एकाकी और कुंठित स्थिति में गुज़ारना पड़ता है। यह पारिवारिक संरचना के उस दोहरे और स्वार्थी मापदंड को दर्शाता है, जहाँ एक ओर बेटी को 'आर्थिक संबल' मानकर उसका उपयोग किया जाता है, किंतु उसकी व्यक्तिगत, भावनात्मक और जैविक इच्छाओं को परिवार की वेदी पर चुपचाप बलि चढ़ा दिया जाता है।

- **सैन्य परिवारों का दर्द और मनोवैज्ञानिक विघटनः 'सूखते चिनार'**

'सूखते चिनार' उपन्यास में कांकरिया ने एक नितांत अछूते विषय को उठाया है। इसमें एक मारवाड़ी युवक संदीप (कथानायक) अपने पारंपरिक व्यापारिक परिवार से बग़ावत कर सेना में भर्ती होता है। वह परिवार जहाँ पुरखों के हाथों में सदा व्यापार का 'तराजू' हुआ करता था, वहाँ संदीप के हाथों में 'बंदूक' आ जाती है। वह 'नेशन नीड्स यू' का विज्ञापन पढ़कर सेना में जाता है।

सैन्य जीवन और आतंकवाद की त्रासदियाँ केवल कश्मीर की सरहदों पर नहीं, बल्कि घर की चारदीवारी के भीतर भी घटित होती हैं। मेजर संदीप के शहीद होने पर, तिरंगे में लिपटकर आने वाले उसके शव (जो साबुत नहीं था, बल्कि कटे–फटे कटपीस में था) को देखकर परिवार का जो भयंकर मानसिक विघटन होता है, उसका

अत्यंत मार्मिक चित्रण लेखिका ने 'युद्ध और बुद्ध' तथा संबंधित कहानियों में किया है। युवा विधवा का शेष जीवन स्मृतियों के टुकड़ों के सहारे कटता है, जबकि देवर, जो बाहर से बिलकुल सामान्य दिखता है, भीतर ही भीतर मानसिक अवसाद और ग्लानि (कि वह अपने भाई को नहीं बचा सका) के कारण जानलेवा बीमारी (व्हाइट ब्लड सेल कम होना) का शिकार होकर तिल–तिल कर मरता है। यहाँ परिवार एक ऐसा अखाड़ा बन जाता है जहाँ राष्ट्र–प्रेम और शहादत की कीमत पीढ़ियों के मूक, रिसते हुए दर्द के रूप में चुकाई जाती है।

- **राजनैतिक विस्थापन और पारिवारिक विखंडन की त्रासदी**

राजनीति और सरहदें किस प्रकार परिवारों को चीर कर रख देती हैं, इसका उत्कृष्ट उदाहरण कांकरिया की एक कहानी में मिलता है जहाँ 'स्ट्रैंडेड पाकिस्तानी' समुदाय की व्यथा व्यक्त हुई है। सीवान (बिहार) का एक समृद्ध मुस्लिम परिवार बँटवारे के समय ढाका चला जाता है। वहाँ जुड़वां बहनें–इशरत और कथावाचिका बड़ी होती हैं। इशरत का विवाह कलकत्ता में हो जाता है, जबकि दूसरी बहन ढाका में ही रहती है। 1971 के युद्ध और बांग्लादेश निर्माण के बाद, जो बहन ढाका में थी, वह 'बिना देश की' हो जाती है। राजनैतिक सरहदों ने एक हँसते–खेलते परिवार को इस कदर बाँट दिया कि दोनों जुड़वां बहनें जीवन भर एक–दूसरे से मिलने के लिए तरसती रहती हैं। ''पानी से पानी क्या अलग हो सकता है? लेकिन हो गया''। यह प्रसंग सिद्ध करता है कि वृहत राजनीतिक उथल–पुथल सबसे पहला और सबसे गहरा आघात 'परिवार' रूपी संस्था पर ही करती है।

पारिवारिक विघटन के अंतर्निहित कारकः द्वितीयक एवं तृतीयक अंतर्दृष्टि

मधु कांकरिया के संपूर्ण कथा–साहित्य का समाजशास्त्रीय अनुशीलन करने पर पारिवारिक विघटन के जो द्वितीयक और तृतीयक कारण स्पष्ट होते हैं, वे भारतीय समाज के वर्तमान संक्रमण काल को भली–भांति परिभाषित करते हैं:

- **बाज़ारवाद और उपयोगितावादी दृष्टिकोणः** वैश्वीकरण और नव–उदारवाद ने मानवीय रिश्तों में गहरी घुसपैठ कर ली है। 'उड़ान' कहानी का रिटायर बुजुर्ग हो या 'हम यहाँ थे' के विस्थापित आदिवासी जब व्यक्ति या समूह आर्थिक रूप से अनुत्पादक हो जाता है, तो परिवार और समाज उसे बोझ मानने लगता है। परिवार अब भावनाओं का नहीं, बल्कि 'सर्वाइवल ऑफ़ द फिटेस्ट' का केंद्र बन गया है। कांकरिया के शब्दों में, रिश्ते अब 'पीतल के बर्तनों' की तरह नहीं रहे जो आपस में खटकते हुए भी इकट्ठे रहते थे; अब वे आधुनिक उपभोक्तावादी संस्कृति के काँच की तरह हो गए हैं जो ज़रा सी ठेस लगने पर टूटकर बिखर जाते हैं।
- **छद्म स्त्री–मुक्ति बनाम वास्तविक संतुलनः** कांकरिया स्त्री–विमर्श की प्रबल समर्थक हैं, परंतु वे पाश्चात्य अंधानुकरण और 'छद्म आधुनिकता' का कड़ा विरोध करती हैं। उनका स्पष्ट मानना है कि यदि स्त्री–मुक्ति का अर्थ केवल पुरुषों की तरह स्वछंद होना, सिगरेट–शराब पीना, या अपने करियर की अंधी दौड़ में बच्चों को अंधेरे कमरों में बंद करना है, तो यह वास्तविक मुक्ति नहीं है। एक कामकाजी माँ जब ''बॉस के लिए फुल–टाइम, पति के लिए हाफ–टाइम और बच्चों के लिए पार्ट–टाइम'' हो जाती है, तो परिवार का गुरुत्वाकर्षण केंद्र नष्ट हो जाता है। काम और मातृत्व के बीच संतुलन की यह कमी एकल परिवारों में बच्चों को अवसाद और नशे की ओर धकेल रही है। इसकी तृतीयक अंतर्दृष्टि यह है कि आज की पीढ़ी का यह 'कंडीशन्ड' अलगाव भविष्य में एक अत्यधिक असहिष्णु, हिंसक और विघटित समाज का निर्माण करेगा।
- **पुरुष–प्रधान अहंकार और देह का वस्तुकरणः** परिवार के टूटने का एक बड़ा कारण पुरुष का यह अहंकार है कि वह 'आश्रयदाता' और सत्ता का केंद्र है। 'हम यहाँ थे' में दीपशिखा का शोषक पति हो, 'सेज पर संस्कृत' के पाखंडी धर्मगुरु हों, या 'सलाम आख़िरी' के दलाल ये सभी पितृसत्तात्मक संरचनाएँ स्त्री को केवल उपभोग की वस्तु मानती हैं। जब स्त्री शिक्षा और जागरूकता के कारण इस

वस्तुकरण का विरोध करती है, तो पारिवारिक ढाँचे में भयानक टकराव उत्पन्न होता है जो अंततः परिवार के विघटन में परिणत होता है।

- **संवादहीनता और बढ़ती असहिष्णुताः** 'रेशे' कहानी की तरह, आधुनिक परिवारों में संवादहीनता एक लाइलाज कैंसर का रूप ले चुकी है। लोग सोशल मीडिया और डिजिटल दुनिया से तो जुड़े हैं, परंतु एक ही छत के नीचे रह रहे पति–पत्नी के बीच मीलों की मनोवैज्ञानिक दूरियाँ हैं। असहिष्णुता इतनी बढ़ गई है कि समझौते के लिए कोई भी पक्ष तैयार नहीं है, जिसके परिणामस्वरूप तलाक, अलगाव और मानसिक अवसाद की दरें तेज़ी से बढ़ रही हैं।

निष्कर्ष

मधु कांकरिया का विपुल कथा–साहित्य केवल भारतीय समाज का एक निष्क्रिय दर्पण नहीं है, बल्कि यह एक सचेत और सक्रिय 'सभ्यता विमर्श' है। उनके उपन्यासों में चित्रित परिवार चाहे वह 'खुले गगन के लाल सितारे' का मूल्य–हीन होता मध्यवर्गीय संयुक्त परिवार हो, 'पत्ताखोर' का भटकाव से भरा महानगरीय एकल परिवार हो, या 'सेज पर संस्कृत' का पुरुष–विहीन विघटित परिवार हो–सभी आधुनिक सभ्यता के भीषण संक्रमण काल की व्यथा को पूरी शिद्दत से व्यक्त करते हैं।

इस विस्तृत अध्ययन से यह निष्कर्ष निकलता है कि कांकरिया पारिवारिक टूटन का मात्र विलाप नहीं करतीं। वे अत्यंत तार्किक रूप से यह मानती हैं कि जो पारंपरिक पारिवारिक संरचनाएँ स्त्री के शोषण, घरेलू हिंसा और दमन पर टिकी थीं, उनका टूटना ऐतिहासिक रूप से अपरिहार्य और प्रगतिशील कदम है। संघमित्रा ('सेज पर संस्कृत') और दीपशिखा ('हम यहाँ थे') जैसी नायिकाएँ विघटित परिवारों की राख से फीनिक्स पक्षी की तरह उठकर अपने लिए नया आसमान तलाशती हैं। दीपशिखा का निजी पारिवारिक दुःख और विक्षोभ उसे आदिवासियों के वृहत्तर सामाजिक परिवार से जोड़ देता है, जहाँ वह उनके 'जल, जंगल और ज़मीन' के संघर्ष की भागीदार बनती है। यह मधु कांकरिया के साहित्य की सबसे बड़ी वैचारिक शक्ति है–वे अत्यंत सहजता से 'पारिवारिक बोध' को 'राष्ट्र बोध' और वैश्विक मानवीय करुणा में रूपांतरित कर देती हैं।

अंततः, मधु कांकरिया का समाजशास्त्रीय साहित्य हमें यह गंभीर चेतावनी देता है कि विकास, आधुनिकीकरण और नारी–मुक्ति के नाम पर यदि हम 'परिवार' नामक उस प्राकृतिक नर्सरी को ही नष्ट कर देंगे जहाँ प्रेम, करुणा और संस्कार जन्म लेते हैं, तो हम एक ऐसा हिंसक, अवसादग्रस्त और छिन्न–भिन्न समाज बनाएँगे जिसका कोई मानवीय भविष्य नहीं होगा। अतः, वर्तमान युग की सबसे बड़ी आवश्यकता एक ऐसे संतुलित पारिवारिक पारिस्थितिकी तंत्र के निर्माण की है, जहाँ न तो स्त्री की स्वतंत्रता और गरिमा बाधित हो, न वृद्धों का सम्मान कम हो, और न ही आधुनिकता की अंधी दौड़ में बच्चों का बचपन छिने।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. 'मधु कांकरिया के कथा साहित्य में पारिवारिक युगबोध', हिंदी जर्नल (Hindi Journal)।
2. 'मधु कांकरिया के उपन्यासों में नारी विमर्शः एक विश्लेषणात्मक अध्ययन', इंस्पिरा जर्नल्स (Inspira Journals)।
3. 'हम यहाँ थे उपन्यास में जीवन का यथार्थ एवं आदिवासी संघर्ष', JETIR (Journal of Emerging Technologies and Innovative Research)।
4. 'खुले गगन के लाल सितारे उपन्यास में आदिवासी–विमर्श', KTHM कॉलेज शोध प्रपत्र।
5. 'मधु कांकरिया का कथा साहित्यः स्त्री विमर्श', राजस्थली शोध पत्रिका।
6. 'सलाम आख़रीः महानगरीय वेश्या जीवन की त्रासद गाथा', रिसर्चगेट (ResearchGate) एवं IJEDRA
7. 'सेज पर संस्कृतः धार्मिक पाखंड की गाथा', रिसर्चगेट (ResearchGate)।.

❑❑❑